सतीश कुमार मित्तल, जे. के समक्ष

क़हर सिंह - याचिकर्ता

बनाम

निशान सिंह और अन्य - उत्तरदाताओ

सी आर 2003 का संख्या 2998

10 जनवरी, 2006

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908–भारत का संविधान, 1950–अनुच्छेद 227–भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 धारा 18, 30–याचिकाकर्ता अधिग्रहीत भूमि के हिस्से पर किरायेदार है–अर्जित भूमि का पुरस्कार दिया गया याचिकाकर्ता धारा 30 के तहत संदर्भ दाखिल कर रहा है मुआवजे के बंटवारे के लिए - मकान मालिक भी मुआवजे में वृद्धि के लिए धारा 18 के तहत संदर्भ दाखिल कर रहा है - संदर्भ न्यायालय ने मकान मालिक और किरायेदार को दिए गए मुआवजे के बंटवारे का हकदार माना है - फैसले के खिलाफ मकान मालिक द्वारा दायर की गई पहली अपील उच्च न्यायालय में लंबित है और एलपीए द्वारा दायर की गई है अंतरिम आदेश के खिलाफ उसे खारिज कर दिया गया - घोषणा के लिए सिविल सूट - मामला एडीजे के संदर्भ न्यायालय द्वारा पहले ही तय किया जा चुका है - ट्रायल कोर्ट द्वारा मुद्दों को तैयार करना - क्षेत्राधिकार, रखरखाव के मुद्दों और पुनर्न्याय के सिद्धांतों द्वारा वर्जित किए गए मुकदमे को प्रारंभिक मुद्दों के रूप में मानने के लिए आवेदन - चुनौती की अस्वीकृति - ट्रायल कोर्ट का निष्कर्ष कि संदर्भ न्यायालय के समक्ष कोई विशेष मुद्दा नहीं था पार्टियों के बीच मकान मालिक और किरायेदार का रिश्ता टिकाऊ नहीं है - ट्रायल कोर्ट ने इस तथ्य को नजरअंदाज कर दिया कि किरायेदारी से संबंधित मुद्दा संदर्भ न्यायालय के समक्ष निर्णय का विषय था - ट्रायल कोर्ट को क्षेत्राधिकार, रखरखाव और पुनर्निर्णय के मुद्दों को प्रारंभिक मुद्दों के रूप में मानने का निर्देश देते हुए याचिका को अनुमति दी गई।

अभिनिर्णित, कि ट्रायल कोर्ट अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में विफल रहा है, जबकि याचिकाकर्ता की अधिकार क्षेत्र, रखरखाव और पुनर्न्याय के मुद्दों को प्रारंभिक मुद्दों के रूप में मानने की प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया है। यह देखा गया है कि पार्टियों के बीच मकान मालिक और किरायेदार के रिश्ते के बारे में संदर्भ न्यायालय के समक्ष कोई विशेष मुद्दा नहीं था। मुद्दा यह था कि "क्या वादी अकेले मुआवजे की पूरी राशि का दावा करने का हकदार है या इसे किरायेदार के साथ बांटा जाना चाहिए"। आगे यह देखा गया कि संदर्भ न्यायालय के समक्ष कोई मुद्दा नहीं था कि क्या प्रतिवादियों को मुकदमे की संपत्ति में किरायेदारों के रूप में दिखाने वाली संपूर्ण खसरा गिरदावरी और जमाबंदियां गलत हैं या नहीं। मौजूदा मामले में उक्त मुद्दे पर अभी भी फैसला होना बाकी है। उस प्रयोजन के लिए, विस्तृत साक्ष्य की आवश्यकता है। अत: प्रारम्भिक वादों के निर्णय पर वाद का अन्तिम निस्तारण नहीं किया जा सकता। ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किया गया यह तर्क टिकाऊ नहीं है। इसने रेफरेंस कोर्ट द्वारा

निर्णय के दायरे और रेफरेंस कोर्ट द्वारा निर्धारित मुद्दों से संबंधित बाद के मुकदमे दायर करने के दायरे को ठीक से नहीं समझा है। अधिनियम की धारा 30 न्यायालय में भेजे जाने वाले दो प्रकार के मामलों पर विचार करती है यानी मुआवजे के बंटवारे के संबंध में विवाद, और वह व्यक्ति जिसे मुआवजा देय है। किसी भी विवाद के संबंध में अधिनियम के तहत जिस व्यक्ति को मुआवजा देय है, उसका संदर्भ एक मुकदमे की प्रकृति में है, वास्तव में इंटरप्लीडर मुकदमे की प्रकृति में है। अधिनियम की धारा 30 के तहत संदर्भ न्यायालय के समक्ष प्रक्रिया भी सिविल प्रक्रिया संहिता में निहित प्रावधानों द्वारा शासित होती है क्योंकि धारा 30 में स्पष्ट रूप से या आवश्यक आवेदन द्वारा कोई प्रावधान नहीं है कि सीपीसी के प्रावधान लागू नहीं हैं। अधिनियम की धारा 30 के तहत एक निर्णय एक डिक्री है और इस प्रकार पीड़ित पक्ष को अपील करने का अधिकार है। संदर्भ टिंडर पर निर्णय अधिनियम की धारा 30 पार्टियों के स्वामित्व और हितों के प्रश्न का निर्णय करती है, और यह उन पर बाध्यकारी है। अब यह पूछा जा सकता है कि क्या न्यायाधीश द्वारा मुआवजे या संपत्ति के शीर्षक के बंटवारे के संदर्भ में निर्णय अधिनियम की धारा 11 के तहत बाद के मुकदमे में पुनर्निर्णय के रूप में काम करेगा और पार्टियों के बीच ऐसा निर्णय उन्हें बाद में बाध्य करेगा सुविधाजनक होना। रेसजुडिकाटा का सिद्धांत न्यायिक निर्णयों को अंतिम रूप देने की आवश्यकता पर आधारित है। इसमें कहा गया है कि एक बार निर्णय लेने के बाद दोबारा निर्णय नहीं दिया जाएगा। प्रभाजन के अधिकार में आवश्यक रूप से दावेदार या आपत्तिकर्ता के अधिकार/स्वामित्व का निर्धारण शामिल है। इसलिए, उसी प्रश्न पर बाद के मुकदमे में किसी अन्य अदालत द्वारा विचार और निर्धारण नहीं किया जा सकता है।

(पैरा 8, 9, 11 और 12)

आगे निर्णीत किया, सी.पी.सी. की धारा 9 में यह प्रावधान है कि न्यायालयों को नागरिक प्रकृति के सभी मुकदमों की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र होगा, उन मुकदमों को छोड़कर जिनमें उनकी सहमति या तो स्पष्ट रूप से या परोक्ष रूप से वर्जित है। यदि कोई कानून स्पष्ट रूप से ऐसा कहता है तो मुकदमा स्पष्ट रूप से वर्जित है। यदि कोई मुकदमा एक नया अधिकार बनाता है और एक विशेष विशेष उपाय निर्धारित करता है तो यह अंतर्निहित रूप से वर्जित है। उस स्थिति में, क्षेत्राधिकार के बहिष्कार का अनुमान लगाया जा सकता है। यदि किसी भूमि का अधिग्रहण किया जाता है और भूमि पर किरायेदार भी उस खाते पर मुआवजे में बंटवारे का दावा करता है, तो उसे अधिनियम की धारा 30 के तहत संदर्भ बनाने के लिए विशेष उपाय प्रदान किया गया है। दूसरी ओर, यदि भूमि मालिक दावा करता है कि वह पूरे मुआवजे के लिए विशेष रूप से हकदार है और दावा करता है कि किरायेदार मुआवजे में किसी भी बंटवारे का हकदार नहीं है, तो मकान मालिक को धारा 30 के तहत आवश्यक संदर्भ का विशेष उपाय भी प्रदान किया गया है। कार्यवाही करना। ऐसे विवादों का निर्णय अधिनियम की धारा 30 के तहत सिविल न्यायालय द्वारा किसी भी संदर्भ पर किया जा रहा है। इस प्रकार, ऐसी स्थिति में, सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार निहित रूप से वर्जित है। ट्रायल कोर्ट उपरोक्त

कानूनी स्थिति पर ध्यान देने में विफल रहा है। याचिकाकर्ता का नाम राजस्व रिकॉर्ड में किरायेदार के रूप में दर्ज था, इसलिए, वह अर्जित भूमि में रुचि रखने वाला व्यक्ति था। उन्होंने किरायेदार होने के नाते अर्जित भूमि के मुआवजे में हिस्सेदारी का दावा करते हुए अधिनियम की धारा 30 के तहत संदर्भ मांगा। ट्रायल कोर्ट ने इस तथ्य को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया है कि किरायेदारी से संबंधित मुद्दा संदर्भ न्यायालय के समक्ष निर्णय का विषय था। भले ही वादी ने संदर्भ न्यायालय के समक्ष यह दलील नहीं दी है कि राजस्व प्रविष्टियाँ गलत थीं, सी.पी.सी. की धारा 11 के स्पष्टीकरण IV के मद्देनजर उन दलीलों को बाद के मुकदमे में लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

(पैरा 13 और 16)

सी बी गोयल, अधिवक्ता, याचिकर्ता के लिये

एस न सेनी, अधिवक्ता, उत्तरदाताओ संख्या 1 के लिए

निर्णय

सतीश कुमार मित्तल, जे.

(1) याचिकाकर्ता, जो मुकदमे में प्रतिवादियों में से एक है, ने सिविल जज (जूनियर डिवीजन), पानीपत द्वारा पारित 19 मई, 2003 के आदेश को रद्द करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत याचिका दायर की है - जिसके तहत याचिकाकर्ता द्वारा अधिकार क्षेत्र, रखरखाव और पुनर्न्याय के मुद्दों को प्रारंभिक मुद्दों के रूप में मानने के लिए दायर आवेदन को खारिज कर दिया गया है।

(2) इस मामले में, हरियाणा राज्य ने 23 फरवरी, 1989 की अधिसूचना के जरिए गांव पट्टी तरफ इंसार, पानीपत की राजस्व संपत्ति के भीतर स्थित कुछ भूमि का अधिग्रहण किया, जिसमें वादी-प्रतिवादी निशान सिंह की भूमि भी शामिल थी। वादी-प्रतिवादी की अर्जित भूमि के हिस्से पर, याचिकाकर्ता और मुकदमे में एक अन्य प्रतिवादी, संपूर्ण सिंह, किरायेदार थे। याचिकाकर्ता 1972 से प्रति वर्ष 92 रुपये प्रति बीघे की दर से किराया भुगतान पर 3 बीघे 11 बिस्वा भूमि पर किरायेदार था। संपूर्ण सिंह, प्रतिवादी 1970 से 1992 तक प्रति वर्ष 92 रुपये प्रति बीघे की दर से किराया भुगतान पर खसरा नंबर 4453 में शामिल 3 बीघे 10 बिस्वा भूमि पर किरायेदार था।। उक्त अधिग्रहण के संबंध में, भूमि अधिग्रहण कलेक्टर ने भूमि अधिग्रहण अधिनियम (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 11 के तहत 31 मार्च, 1994 को पुरस्कार दिया। चूँकि याचिकाकर्ता अर्जित भूमि के एक हिस्से पर किरायेदार था, उसने किरायेदार होने के नाते मुआवजे का दावा किया, लेकिन जब वादी-प्रतिवादी मुआवजे से अलग होने के लिए सहमत नहीं हुआ, तो याचिकाकर्ता ने मुआवजे के बंटवारे के लिए अधिनियम की धारा 30 के तहत संदर्भ दायर किया। वादी-प्रतिवादी ने मुआवजे की वृद्धि के लिए अधिनियम

की धारा 18 के तहत एक संदर्भ आवेदन भी दायर किया। दोनों संदर्भ आवेदनों को संबंधित दावों के निर्णय के लिए अधिनियम की धारा 30 के तहत अतिरिक्त जिला न्यायाधीश की अदालत में भेजा गया था। रेफरेंस कोर्ट के समक्ष दोनों पक्षों ने अपने-अपने दावे रखे. याचिकाकर्ता और अन्य किरायेदार संपूर्ण सिंह ने दावा किया कि वे मुकदमे की जमीन पर किरायेदार हैं, जिसका स्वामित्व उसके पिता सुंदर सिंह के पास है। वादी, और यह दावा किया गया था कि वे अधिनियम के तहत दिए गए मुआवजे के 3/4 हिस्से के साथ-साथ बढ़े हुए मुआवजे के बंटवारे के हकदार थे।

(3) सुंदर्ब न्यायालय ने 31 मार्च, 1994 के अपने फैसले में कहा कि केहर सिंह और संपूर्ण सिंह दोनों मृतक सुंदर सिंह के अधीन किरायेदार थे, जिनका प्रतिनिधित्व अब उनके बेटे निशान सिंह (वादी-प्रतिवादी) द्वारा रुपये की दर से लगान के भुगतान पर किया जाता है। खसरा नंबर 4453 और 4454 में शामिल 3 बीघे 11 बिस्वा और 3 बीघे 10 बिस्वा भूमि के संबंध में 92 रुपये प्रति बीघे। उक्त निष्कर्ष को दर्ज करने के बाद, संदर्भ न्यायालय ने माना कि मकान मालिक और किरायेदार क्रमशः 2/3 शेयर और 1/3 शेयर के अनुपात में दिए गए मुआवजे को बांटने के हकदार हैं। उक्त पुरस्कार के विरुद्ध, 2000 का आरएफए संख्या 827 (निशान सिंह बनाम हरियाणा राज्य) लंबित है और किरायेदार को मुआवजे की राशि के वितरण पर रोक लगाने के लिए निशान सिंह द्वारा दायर आवेदन को अंतरिम आदेश द्वारा निपटाया गया था कि मुआवजे का भुगतान किया जाए किरायेदार को, निष्पादन न्यायालय की संतुष्टि के लिए सुरक्षा के अधीन। उक्त आदेश को प्रतिवादी-निशान सिंह ने 2000 का एलपीए नंबर 1620 दाखिल करके चुनौती दी थी, जिसे 16 नवंबर, 2000 को खारिज कर दिया गया था।

(4) उपरोक्त आदेशों के पारित होने के बाद, प्रतिवादी निशान सिंह ने निम्नलिखित प्रार्थना के साथ घोषणा के लिए तत्काल सिविल वाद दायर किया:-

> "इसलिए, यह प्रार्थना की जाती है कि यह माननीय न्यायालय वादी श्री निशान सिंह को खसरा संख्या 4453 मिनट दक्षिण (1) में दर्ज 3 बीघे और 11 बिस्वा भूमि का पूर्ण स्वामी घोषित करने का आदेश पारित करने की कृपा करें। -0), खसरा नंबर 4454 (2-11) और 3 बीघे और 10 बिस्वा, खसरा नंबर 4453 मिनट में शामिल है, जो गांव पट्टी तरफ इंसार, पानीपत, तहसील और जिला पानीपत में स्थित है और भूमि अधिग्रहण कलेक्टर से पूरा मुआवजा वसूलने का भी हकदार है। , पानीपत और वह हरियाणा राज्य और यह भी घोषित करता है कि उक्त विवादित भूमि के लिए पटवारी द्वारा दर्ज किया गया रिकॉर्ड अमान्य, गलत और बिना किसी परिणाम के है। इसके अलावा, प्रतिवादियों का नाम उपरोक्त राजस्व प्रविष्टियों से हटा दिया जाएगा और

उपरोक्त के बदले में उन्हें कोई मुआवजा नहीं दिया जाएगा और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के तहत पारित किया जाएगा।"

(5) नोटिस दिए जाने पर, याचिकाकर्ता और एक अन्य प्रतिवादी संपूर्ण सिंह, जो निशान सिंह के पिता के स्वामित्व वाली अधिग्रहित भूमि के हिस्से पर किरायेदार भी थे, ने उपरोक्त मुकदमे का विरोध किया और क्षेत्राधिकार, रखरखाव के संबंध में विभिन्न प्रारंभिक आपत्तियां उठाईं और कहा कि यह मुकदमा पुनर्निर्ण्य के सिद्धांतों द्वारा वर्जित है। यह कहा गया है कि सिविल कोर्ट को सी.पी.सी. की धारा 9 के तहत मुकदमे पर विचार करने और निर्णय लेने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। बहिष्कृत है. इस मामले का फैसला अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, पानीपत की अदालत द्वारा 25 फरवरी, 2000 को किया जा चुका है। इस प्रकार, क्षेत्राधिकार के आधार पर मुकदमा खारिज किये जाने योग्य है। यह भी दलील दी गई कि मुकदमा कानून के तहत चलने योग्य नहीं है क्योंकि वादी ने पहले ही अधिनियम की धारा 18 और 30 के तहत संदर्भ याचिका दायर कर दी है। उक्त सन्दर्भ याचिका में समान पक्षों के बीच विवाद का निर्णय अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, पानीपत की अदालत द्वारा किया गया है - अपने फैसले दिनांक 25 फरवरी, 2000 के तहत, और उक्त फैसले के खिलाफ, वादी ने पहले से ही इस न्यायालय में नियमित प्रथम अपील दायर की है जिसमें निष्पादन न्यायालय की संतुष्टि के लिए सुरक्षा के अधीन किरायेदारों को मुआवजे का भुगतान करने का आदेश दिया गया था। आगे यह दलील दी गई कि उक्त पुरस्कार में दर्ज निष्कर्ष पुनर्न्याय के रूप में काम करेगा। अत: तत्काल मुकदमा कायम रखने योग्य नहीं है।

(6) पक्षों की दलीलों पर, निम्नलिखित मुद्दे तय किए गए: -

"1. क्या वादी के पिता सुंदर सिंह वादी के पैरा संख्या 3 में वर्णित वाद संपत्ति के मालिक थे? ओपीपी.

2. चतुर के नाम की प्रविष्टि है या नहीं. नंबर 1 केहर सिंह खसरा नंबर 4453 मिनट (1-0) और खसरा नंबर 4454 (2-11) में 3 बीघा 11 बिस्वा किरायेदार के रूप में और बख्तरबंद का नाम। क्रमांक 3 खसरा नंबर 4453 मिनट में 3 बीघा 10 बिस्वा भूमि के संबंध में किरायेदार के रूप में गलत, त्रुटिपूर्ण हैं और सही किए जाने योग्य हैं? ओपीपी.

3. क्या वादी इस स्वामित्व के आधार पर एलएसी, पानीपत से पूर्ण मुआवजा वसूलने का हकदार है? ओपीपी.

4. क्या सिविल न्यायालय को वर्तमान मुकदमे की सुनवाई का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है? ओपीडी.

5. क्या वाद वर्तमान स्वरूप में चलने योग्य नहीं है? ओपीसी.

6. क्या वादी ने न्यायालय से सत्य एवं भौतिक तथ्य छिपाये हैं? ओपीडी.
7. क्या वादी को उसके स्वयं के कार्य और आचरण से वर्तमान मुकदमा दायर करने से रोक दिया गया है? ओपीडी.
8. क्या मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित है? ओपीडी.
9. क्या पार्टियों के गलत जुड़ाव के लिए मुकदमा बुरा है? ओपीडी.
10. क्या वादी के पास वर्तमान मुकदमा दायर करने का कोई कारण नहीं है? ओपीडी.
11. क्या मुक़दमा न्यायिक सिद्धांतों के अनुसार ख़राब है? ओपीडी.
12. क्या वादी के पास वर्तमान मुकदमा दायर करने का कोई अधिकार नहीं है? ओपीडी.
13. राहत."

(7) मुद्दों को तैयार करने के बाद, याचिकाकर्ता/प्रतिवादियों ने क्षेत्राधिकार, रखरखाव और न्यायिकता के मुद्दों यानी मुद्दे संख्या 4, 5 और 11 को प्रारंभिक मुद्दों के रूप में मानने के लिए एक आवेदन दायर किया। उक्त आवेदन को ट्रायल कोर्ट द्वारा निम्नलिखित आदेश देते हुए खारिज कर दिया गया है: -

"इसमें कोई संदेह नहीं है कि जिस मुद्दे पर मामला पूरी तरह से और अंततः निपटाया जा सकता है और जिन मुद्दों में केवल कानून का प्रश्न शामिल है, उन्हें प्रारंभिक मुद्दा माना जा सकता है, लेकिन यदि उक्त मुद्दे के लिए विस्तृत साक्ष्य की आवश्यकता होती है, तो उन मुद्दों को प्रारंभिक मुद्दा नहीं माना जाना चाहिए प्रारंभिक मुद्दे. यद्यपि वर्तमान मुकदमे का मामला एलए अधिनियम की धारा 18 और 30 के तहत एक संदर्भ में एडीजे, पानीपत के समक्ष भी मामला था, लेकिन एडीजे पानीपत के फैसले के अवलोकन से पता चलता है कि मकान मालिक और मकान मालिक के रिश्ते के बारे में कोई विशेष मुद्दा नहीं था। उसके सामने पार्टियों के बीच किरायेदार। विद्वान एडीजे पानीपत द्वारा तय किया गया मुद्दा यह था कि "क्या याचिकाकर्ता अकेले मुआवजे की पूरी राशि का दावा करने के हकदार हैं या इसे उनके और प्रतिवादी संख्या 3 से 5 के बीच विभाजित किया जाना है।" यह सवाल अभी भी तय होना बाकी है कि प्रतिवादियों को मुकदमे की संपत्ति में किरायेदार के रूप में दिखाने वाली खसरा-गिरदावरी और जमाबंदी की प्रविष्टियाँ गलत हैं या नहीं। केवल विद्वान एडीजे पानीपत के फैसले का अवलोकन करने से मामले का अंतिम निस्तारण नहीं किया जा सकता। वादी ने राजस्व रिकॉर्ड में प्रतिवादी संख्या 1 से 3 के नाम की कथित गलत

प्रविष्टियों के संबंध में राहत मांगी है और केवल क्षेत्राधिकार, रखरखाव और न्यायिकता के मुद्दे पर निष्कर्ष देने पर राहत नहीं दी जा सकती है या अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। मकान मालिक और किरायेदार के रिश्ते के बिंदु पर मुकदमे को पुनर्न्याय के सिद्धांतों द्वारा वर्जित पाया जा सकता है, लेकिन केवल इसके कारण राजस्व रिकॉर्ड में प्रविष्टियों में सुधार के संबंध में राहत के संबंध में मुकदमे को वर्जित नहीं कहा जा सकता है। इसके अलावा, वर्तमान मुकदमे में वादी द्वारा एडीजे पानीपत द्वारा पारित फैसले को भी चुनौती दी गई है। हालाँकि यह अभी तय होना बाकी है कि क्या यह न्यायालय इस प्रश्न पर विचार कर सकता है कि क्या विद्वान एडीजे पानीपत का निर्णय निर्णय लेने योग्य है, लेकिन इस स्तर पर यह नहीं कहा जा सकता है कि उक्त निर्णय के आधार पर वादी को गैर-अनुकूलित किया जाना चाहिए। इस प्रकार मेरी राय में, इन तीन मुद्दों को केवल प्रारंभिक मुद्दे मानकर, वादी के मुकदमे का अंतिम रूप से निपटारा नहीं किया जा सकता है क्योंकि इन मुद्दों में केवल कानून का प्रश्न शामिल नहीं है, बल्कि इनमें तथ्यों और कानून का मिश्रित प्रश्न शामिल है। इस प्रकार, मेरी राय में इन मुद्दों को प्रारंभिक मुद्दों के रूप में नहीं माना जा सकता है।"

(8) मैंने पक्षों के वकीलों को विस्तार से सुना है और आक्षेपित आदेश के साथ-साथ अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, पानीपत द्वारा पारित 25 जनवरी, 2000 के फैसले का भी अवलोकन किया है। मेरी राय में, इस मामले में ट्रायल कोर्ट उपरोक्त तीन मुद्दों को प्रारंभिक मुद्दों के रूप में मानने के लिए याचिकाकर्ता की प्रार्थना को अस्वीकार करते हुए अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में विफल रहा है। यह देखा गया है कि पार्टियों के बीच मकान मालिक और किरायेदार के रिश्ते के बारे में संदर्भ न्यायालय के समक्ष कोई विशेष मुद्दा नहीं था। मुद्दा यह था कि "क्या वादी अकेले मुआवजे की पूरी राशि का दावा करने का हकदार है या इसे किरायेदारों के साथ बांटा जाना चाहिए"। आगे यह देखा गया कि संदर्भ न्यायालय के समक्ष कोई मुद्दा नहीं था कि प्रतिवादियों को मुकदमे की संपत्ति में किरायेदारों के रूप में दिखाने वाली खसरा गिरदावरी और जमाबंदी की प्रविष्टियाँ गलत हैं या नहीं। मौजूदा मामले में उक्त मुद्दे पर अभी भी फैसला होना बाकी है। उस प्रयोजन के लिए, विस्तृत साक्ष्य की आवश्यकता है। अत: प्रारम्भिक वादों के निर्णय पर वाद का अन्तिम निस्तारण नहीं किया जा सकता।

(9) मेरी राय में, ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किया गया उपरोक्त तर्क टिकाऊ नहीं है। इसने संदर्भ न्यायालय द्वारा निर्णय के दायरे और संदर्भ न्यायालय द्वारा निर्धारित मुद्दों से संबंधित बाद

के मुकदमे दायर करने के दायरे को ठीक से नहीं समझा है। अधिनियम की धारा 30 इस प्रकार है:-

> *"**30 बंटवारे के संबंध में विवाद-** जब मुआवजे की राशि धारा 11 के तहत तय हो गई है, तो यदि उसी या उसके किसी हिस्से के बंटवारे या उन व्यक्तियों के संबंध में कोई विवाद उत्पन्न होता है, जिन्हें वह या उसका कोई हिस्सा देय है, तो कलेक्टर ऐसे विवाद को संदर्भित कर सकता है। न्यायालय का निर्णय।"*

(10) अधिनियम की धारा 3(डी) के तहत "न्यायालय" शब्द को भी परिभाषित किया गया है, जो इस प्रकार है:-

> *"अभिव्यक्ति "न्यायालय" का अर्थ मूल क्षेत्राधिकार वाला एक प्रधान सिविल न्यायालय है, जब तक कि [उपयुक्त सरकार] ने इस अधिनियम के तहत न्यायालय के कार्यों को करने के लिए किसी निर्दिष्ट स्थानीय सीमा के भीतर एक विशेष न्यायिक अधिकारी नियुक्त (जैसा कि उसे ऐसा करने का अधिकार है) नहीं किया है।"*

(11) अधिनियम की धारा 30 न्यायालय में भेजे जाने वाले दो प्रकार के मामलों पर विचार करती है यानी मुआवजे के बंटवारे के संबंध में विवाद, और वह व्यक्ति जिसे मुआवजा देय है। किसी भी विवाद के संबंध में अधिनियम के तहत जिस व्यक्ति को मुआवजा देय है, उसका संदर्भ मुकदमे की प्रकृति में है, वास्तव में इंटरप्लीडर मुकदमे की प्रकृति में है। अधिनियम की धारा 30 के तहत संदर्भ न्यायालय के समक्ष प्रक्रिया भी सिविल प्रक्रिया संहिता में निहित प्रावधानों द्वारा शासित होती है क्योंकि धारा 30 में स्पष्ट रूप से या आवश्यक आवेदन द्वारा कोई प्रावधान नहीं है कि सीपीसी के प्रावधान लागू नहीं हैं। अधिनियम की धारा 30 के तहत एक निर्णय अधिनियम की धारा 30 के तहत एक डिक्री है जो पार्टियों के स्वामित्व और हितों के प्रश्न का फैसला करती है, और यह उन पर बाध्यकारी है। अब, यह पूछा जा सकता है कि क्या न्यायाधीश द्वारा मुआवजे या संपत्ति के स्वामित्व के बंटवारे के संदर्भ में लिया गया निर्णय अधिनियम की धारा 11 के तहत बाद के मुकदमे में पुनर्निर्णय के रूप में कार्य करेगा। पार्टियों के बीच ऐसा निर्णय उन्हें अगले मुकदमे में बाध्य करेगा।

(12) पुनर्न्याय का सिद्धांत न्यायिक निर्णयों को अंतिम रूप देने की आवश्यकता पर आधारित है। इसमें कहा गया है कि एक बार निर्णय हो जाने के बाद उस पर दोबारा निर्णय नहीं दिया जाएगा। प्रभाजन के अधिकार में आवश्यक रूप से दावेदार या आपत्तिकर्ता के अधिकार/शीर्षक

का निर्धारण शामिल है। इसलिए, उसी प्रश्न पर बाद के मुकदमे में किसी अन्य न्यायालय द्वारा विचार और निर्धारण नहीं किया जा सकता है। अधिनियम की धारा 30 के तहत मामले का निर्णय करने वाला संदर्भ न्यायालय हालांकि मूल क्षेत्राधिकार वाला एक प्रधान सिविल न्यायालय है, लेकिन सीमित क्षेत्राधिकार वाला न्यायालय है। सीपीसी संशोधन अधिनियम 1976 द्वारा जोड़ी गई धारा 11 सीपीसी में स्पष्टीकरण आठवीं में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि इस तरह के मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए सक्षम सीमित क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय द्वारा सुना गया और अंततः निर्णय लिया गया एक मुद्दा बाद के मुकदमे में न्यायिक के रूप में कार्य करेगा, भले ही ऐसा हो सीमित क्षेत्राधिकार वाला न्यायालय ऐसे बाद के मुकदमे या उस मुकदमे की सुनवाई करने में सक्षम नहीं था जिसमें इस तरह का मुद्दा बाद में उठाया गया हो। सीपीसी में इस संशोधन ने उन सवालों को किसी भी विवाद और संदेह से परे रखा है कि अधिनियम की धारा 30 के तहत संदर्भ में बैठे भूमि अधिग्रहण न्यायाधीश द्वारा स्वामित्व के बारे में कोई भी निष्कर्ष समान प्रतिद्वंद्वी दलों के बीच और वे व्यक्ति जिनके अधीन वे या उनमें से कोई दावा करता है, बाद की कार्यवाही में न्यायिक न्याय के रूप में काम करेगा।

(13) सीपीसी की धारा 9 में यह प्रावधान है कि अदालतों के पास नागरिक प्रकृति के सभी मुकदमों की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र होगा, उन मुकदमों को छोड़कर जिनमें उनका संज्ञान या तो स्पष्ट रूप से या परोक्ष रूप से वर्जित है। यदि कोई कानून स्पष्ट शब्दों में ऐसा कहता है तो मुकदमा स्पष्ट रूप से वर्जित है। यदि कोई मुकदमा एक नया अधिकार बनाता है और एक विशेष विशेष उपाय निर्धारित करता है तो यह अंतर्निहित रूप से वर्जित है। उस स्थिति में, क्षेत्राधिकार के बहिष्कार का अनुमान लगाया जा सकता है। यदि किसी भूमि का अधिग्रहण किया जाता है और भूमि पर किरायेदार भी मुआवजे में बंटवारे का दावा करता है, तो उसे अधिनियम की धारा 30 के तहत संदर्भ बनाने के लिए विशेष उपाय प्रदान किया गया है। दूसरी ओर, यदि भूमि मालिक दावा करता है कि वह पूरे मुआवजे के लिए विशेष रूप से हकदार है और दावा करता है कि किरायेदार मुआवजे में किसी भी बंटवारे का हकदार नहीं है, तो उसे अधिनियम की धारा 30 के तहत आवश्यक संदर्भ का विशेष उपाय भी प्रदान किया गया है। . ऐसे विवादों का निर्णय अधिनियम की धारा 30 के तहत सिविल न्यायालय द्वारा किसी भी संदर्भ पर किया जा रहा है। इस प्रकार ऐसी स्थिति में दीवानी न्यायालय का क्षेत्राधिकार निहित रूप से वर्जित है।

(14) मेरी राय में, ट्रायल कोर्ट उपरोक्त कानूनी स्थिति पर ध्यान देने में विफल रहा है। इस मामले में, याचिकाकर्ता का नाम राजस्व रिकॉर्ड में किरायेदार के रूप में दर्ज किया गया था, इसलिए, वह अधिग्रहित भूमि में रुचि रखने वाला व्यक्ति था। उन्होंने किरायेदार होने के नाते अर्जित भूमि के मुआवजे में हिस्सेदारी का दावा करते हुए अधिनियम की धारा 30 के तहत संदर्भ मांगा। संदर्भ न्यायालय के समक्ष, वादी-प्रतिवादी यह दावा कर रहा था कि याचिकाकर्ता और

एक अन्य किरायेदार मुआवजे में किसी भी बंटवारे के हकदार नहीं थे, क्योंकि वे उसके किरायेदार नहीं थे। इस संबंध में, संदर्भ न्यायालय ने मुद्दा संख्या 2 तय किया "क्या भूमि मालिक अकेले मुआवजे की पूरी राशि का दावा करने का हकदार था या इसे उसके और किरायेदारों के बीच विभाजित किया जाना था?" इस मुद्दे पर निर्णय लेते समय, संदर्भ न्यायालय ने पाया कि इस मुद्दे का निर्णय इस प्रश्न के उत्तर पर निर्भर करता है कि "क्या प्रतिवादी केहर सिंह और संपूर्ण सिंह भूमि अधिग्रहण के समय मृत याचिकाकर्ता सुंदर सिंह के अधीन किरायेदार थे और यदि ऐसा है तो याचिकाकर्ता उक्त उत्तरदाताओं के साथ मुआवजे के बंटवारे का हकदार है।" इस मुद्दे पर, निम्नलिखित निष्कर्ष दर्ज किया गया: -

> *"राजस्व रिकॉर्ड अर्थात् रबी, 1983 से रबी 1990 तक प्रभावी खसरा गिरदावरी, प्रदर्शन आर3 और प्रदर्शन आर5 और रबी, 1992 से आगे प्रदर्शन आर4, साथ ही ख़रीफ़, 1972 से रबी, 1994 तक प्रभावी खसरा गिरदावरी, उदाहरणार्थ आर7, आर8, वर्ष 1978-79 और 1983-84 के लिए आर9, आरआईओ और आरएलएल और जमाबंदियां आरएल और आर2 भी प्रदर्शित करती हैं, जिससे यह साबित होता है कि उक्त दोनों उत्तरदाता 92/- रुपये प्रति बीघे की दर से लगान के भुगतान पर सुंदर सिंह के गैर मौरूसी थे। इसमें कोई विवाद नहीं है कि कुछ राजस्व प्रविष्टियाँ प्रतिवादी बलबीर सिंह के पक्ष में थीं जैसा कि एक्ज़िबिट आर3 और एक्ज़िबिट आर4 में उल्लेखित है। लेकिन मेरे विचार से, इसका कोई परिणाम नहीं है क्योंकि इसे प्रतिवादी संपूर्ण सिंह के नाम पर क्रमशः 17 जनवरी, 1983 के आदेश और डिक्री प्रदर्शन आरएल 2, आर 13 और प्रदर्शन 14 के माध्यम से सही किया गया है।"*
>
> xxx xxx xxx xxx
>
> *"उत्तरदाताओं के साक्ष्य, याचिकाकर्ताओं के साक्ष्य के अलावा, मृत याचिकाकर्ता सुंदर सिंह प्रदर्शनी पी 4, प्रदर्शनी पी 5 और प्रदर्शनी पी 7 के तहत उनकी किरायेदारी के बारे में प्रतिवादी केहर सिंह और संपूर्ण सिंह ने भी ख़रीफ़ 1963 से रबी 1963 तक की खसरा गिरदावरी की प्रतियां दी हैं। हम मुख्य रूप से 1970 और 1972 के बाद के वर्षों से चिंतित हैं क्योंकि उत्तरदाताओं संपूरन सिंह और केहर सिंह ने तब से अपने किरायेदारी अधिकारों का दावा किया है। तो, सबसे महत्वपूर्ण खसरा गिरदावरी प्रदर्शनी पी 7 है जिसमें उत्तरदाताओं बलबीर सिंह और केहर सिंह को याचिकाकर्ता सुंदर सिंह के तहत गैर मौरूसी के रूप में 92/- रुपये प्रति बीघा की दर से लगान के*

भुगतान पर प्रश्नगत भूमि पर खेती योग्य कब्ज़ा दिखाया गया है।इससे पहले, 2बी-11बी की जमीन का हिस्सा प्रतिवादी बलबीर सिंह के भाई पूजा सिंह के रूप में गैर मारुसी के कब्जे में था। ऐसा खसरा गिरदावरी प्रदर्शनी पी8 और प्रदर्शनी पी8 की प्रविष्टियों से स्पष्ट होता है। यहां, मैं यह जोड़ना चाहूंगा कि पूजा सिंह बलबीर सिंह का भाई है, जिसने प्रविष्टियों को अपने एक अन्य भाई संपूर्ण सिंह, प्रतिवादी नंबर 5 के आदेश प्रदर्शनी आर12 और प्रदर्शनी आर13 के पक्ष में बदल दिया है।"

(15) संदर्भ न्यायालय के समक्ष, वादी-प्रतिवादी के वकील द्वारा एक तर्क उठाया गया था कि याचिकाकर्ता केहर सिंह और संपूर्ण सिंह को राजस्व रिकॉर्ड में गैर मारुसी के रूप में दर्ज करने मात्र से वादी के तहत उनके किरायेदारी अधिकार साबित नहीं होते हैं जब तक कि लगान का भुगतान सिद्ध हो गया है। रिकॉर्ड पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है जो यह सुझाव दे सके कि उपरोक्त व्यक्तियों ने कभी वादी को कोई किराया दिया था, इसलिए, उनके किरायेदार को अपने अधीन रखने का सवाल ही नहीं उठता। उक्त विवाद को संदर्भ न्यायालय द्वारा निम्नलिखित टिप्पणी करते हुए विशेष रूप से खारिज कर दिया गया था :-

यह अच्छी तरह से तय है कि किरायेदार द्वारा किराए का वास्तविक भुगतान आवश्यक नहीं है। जरूरी यह है कि किरायेदार द्वारा किराया देने का समझौता किया गया हो। अधिकारों के रिकॉर्ड और खसरा गिरदावरी में प्रविष्टियाँ किरायेदारी के ऐसे अनुबंध का प्रमाण हैं जिसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। यदि राजस्व अधिकारी ने प्रतिवादी केहर सिंह और सम्पूर्ण सिंह के नाम पर फर्जी प्रविष्टियाँ करने में कुछ गलती की है, तो उसे ठीक किया जा सकता है और यदि सुधारात्मक कार्रवाई प्राप्त करने में विफलता हुई, तो याचिकाकर्ता को जमाबंदी में प्रविष्टियाँ के सत्य की धारणा से पीड़ित होना होगा। इसके अलावा, उक्त उत्तरदाताओं के पक्ष में प्रविष्टियाँ जमाबंदियों और खसरा गिरदावरियों की लंबी श्रृंखला में दिखाई दे रही हैं जो याचिकाकर्ता और उक्त उत्तरदाताओं के बीच किरायेदारी के अनुबंध का प्रमाण हैं। जोगिंदर सिंह और एक अन्य बनाम जसवंत सिंह पर भरोसा जताया जा सकता है (2000-1) पी.आर.एल. 247(पी. और. एच)"

(16) तत्काल मुकदमे में, वादी-प्रतिवादी द्वारा की गई प्रार्थना यह है कि वादी 3 बीघे 11 बिस्वा और 3 बीघे 10 बिस्वा की भूमि का पूर्ण मालिक है, और भूमि अधिग्रहण कलेक्टर से पूरा मुआवजा वसूलने का हकदार है, और वाद भूमि पर इस किरायेदारी के संबंध में प्रतिवादियों के पक्ष में की गई आगे की प्रविष्टियाँ गलत हैं, और उसी के आधार पर, प्रतिवादियों को कोई

मुआवजा नहीं दिया जा सकता है। आक्षेपित आदेश में, ट्रायल कोर्ट ने कहा है कि इस मामले में वादी ने प्रतिवादियों के नाम पर राजस्व रिकॉर्ड में गलत प्रविष्टियों के संबंध में राहत मांगी है और केवल अधिकार क्षेत्र के मुद्दों पर निष्कर्ष देकर राहत नहीं दी जा सकती है या अस्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि उपरोक्त विवाद संदर्भ न्यायालय के समक्ष मुद्दा नहीं था। इसलिए, विस्तृत साक्ष्य के बिना प्रारंभिक मुद्दों पर निर्णय नहीं लिया जा सकता था। मेरी राय में, ट्रायल कोर्ट ने इस तथ्य को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया है कि किरायेदारी से संबंधित मुद्दा संदर्भ न्यायालय के समक्ष निर्णय का विषय था। भले ही वादी ने संदर्भ न्यायालय के समक्ष यह दलील नहीं दी है कि राजस्व प्रविष्टियाँ गलत थीं, सीपीसी की धारा 11 के स्पष्टीकरण IV के मद्देनजर उन दलीलों को बाद के मुकदमे में लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, जिसे निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है: –

> *"कोई भी मामला जिसे ऐसे पूर्व मुकदमे में बचाव या हमले का आधार बनाया जा सकता है और बनाया जाना चाहिए था, उसे ऐसे मुकदमे में सीधे और महत्वपूर्ण रूप से मुद्दा माना जाएगा।"*

(17) **पी.के. विजयन बनाम कमलाक्षी अमीना और अन्य में, (1**) इसे निम्नानुसार आयोजित किया गया था: -

> *"यह कहना पर्याप्त है कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 11 के स्पष्टीकरण IV में कहा गया है कि कोई भी मामला जिसे पूर्व मुकदमे में बचाव या हमले का आधार बनाया जाना चाहिए था, उसे सीधे तौर पर एक मामला माना जाएगा और मुकदमे में काफी हद तक मुद्दा; और कोई भी अदालत ऐसे किसी भी मुकदमे या मुद्दे की सुनवाई नहीं करेगी जिसमें मामला सीधे और महत्वपूर्ण रूप से उन्हीं पार्टियों के बीच या उन पार्टियों के बीच पूर्व मुकदमे में हो, जिनके तहत वे या उनमें से कोई दावा करता है, एक ही शीर्षक के तहत मुकदमा कर रहा है, सक्षम अदालत में ऐसे बाद के मुकदमे या उस मुकदमे की सुनवाई करें जिसमें ऐसा मुद्दा बाद में उठाया गया हो और उस पर सुनवाई की गई हो और अंततः ऐसे न्यायालय द्वारा निर्णय लिया गया हो।"*

(18) **कोंडा लक्ष्मण बापूजी बनाम एपी सरकार (2**), में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि धारा 11 और स्पष्टीकरण IV को संयुक्त रूप से पढ़ने से पता चलता है कि एक याचिका जिसे पहले के मुकदमे में लिया जाना चाहिए था, उसे माना जाएगा बाद के मुकदमे में याचिका उठाने वाले व्यक्ति के खिलाफ लिया गया और निर्णय लिया गया। किसी पक्ष को कार्यवाही को लंबा खींचने या कार्यवाही की बहुलता की ओर ले जाने के लिए प्रत्येक क्रमिक चरण में

अलग-अलग दलीलें उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती। इस प्रकार, रचनात्मक निर्णय का नियम इस मामले में भी लागू होता है।

(19) उपरोक्त के मद्देनजर, इस पुनरीक्षण याचिका की अनुमति दी जाती है और सिविल जज (जूनियर डिवीजन) पानीपत द्वारा पारित दिनांक 19 मई, 2003 के आदेश को रद्द कर दिया जाता है। ट्रायल कोर्ट को निर्देश दिया जाता है कि वह क्षेत्राधिकार, रखरखाव और पुनर्न्याय के मुद्दों यानी मुद्दे संख्या 4, 5 और 11 को प्रारंभिक मुद्दों के रूप में माने और इस आदेश में किए गए किसी भी अवलोकन से प्रभावित हुए बिना कानून के अनुसार निर्णय ले।

<u>अस्वीकरण:</u>

भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उदेश्यों के लिये निर्णय का अंग्रेज़ी सस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

सागर शर्मा
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
नूँह, हरियाणा